हिन्दी-विभाग
डॉ० कविता कुमारी सिंह

P.G, Sem II

विषय :— संस्कृत साहित्य में गीतिकाव्य के उद्भव और विकास——

सामान्यतः काव्य या कविता को विषय-प्रधान (subjective) और विषयीप्रधान (objective) नामक दो भागों में विभाजित किया जाता है। विषय-प्रधान अथवा भाव-प्रधान कविता में व्यक्तिगत अनुभूतियों, भावनाओं और आदर्शों की ही प्रधानता रहती है, तथा उसका स्रोत गायक के उत्कट मनोवेगों को माना जाता है। जीवन के ये मनोवेग जब घनीभूत हो शब्द आदर्श में परिणत होते हैं तब 'गीतिकाव्य' का जन्म होता है। गीतिकाव्य इन अव्यक्त मनोवेगों को व्यक्त प्रदान करता है, वह रसाप्लावित हुए कवि की आत्मा को कंठ दे देता है। यही उसकी वृत्ति है, उसी में उसका कलापन है और यही उसकी उपयोगिता है। इस प्रकार गीत या गीति का अर्थ केवल गाना ही नहीं समझना चाहिए बल्कि पाश्चात्य आलोचक 'अर्नेस्ट राइस' के अनुसार वास्तविक गीत वही है जो भाव का, भावात्मक विचारों का भाषा में

स्वाभाविक विस्फोट हो। 'महादेवी वर्मा' के शब्दों में "सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था का विशेष गिने शब्दों में स्वर-साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है।"

रागात्मकता के कारण संगीत को गीतिकाव्य का एक प्रधान तत्व माना जाता है, किन्तु यह आभ्यंतरिक ही अधिक होता है। बाह्य रूप से तो उसे गौण स्थान ही प्राप्त है। शैली की दृष्टि से उसमें सरलता और सुकुमारता भी परमावश्यक है।

'रवीन्द्रनाथ ठाकुर' का मत है — "विषय प्रधान श्रेणी के कवि ही महाकवि कहे जाते हैं तथा उनकी कृतियाँ सर्वदा के लिए समादरणीय हो जाती हैं, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रबन्ध काव्य की तुलना में गीतिकाव्य अथवा प्रगतिकाव्य का कुछ भी महत्व नहीं है तथा गीतिकारों को श्रेष्ठ कवि नहीं माना जा सकता।" 'श्री नन्द-दुलारे वाजपेयी' के शब्दों में "प्रबन्धकाव्य में दृश्य-चित्रण और वस्तु चित्रण के साथ बहुत सा इतिवृत भी लगा रहता है, परन्तु प्रगति रचना में कविता इन समस्त उपचारों से विलग होकर केवल कविता या भाव प्रतिमा बनकर आती है। संगीत के स्वरों

की भाँति प्रगति के शब्द ही अपनी भावना कल्पनाओं द्वारा कविता का निर्माण करते हैं। उनमें शब्द और अर्थ, लय और छन्द अथवा स्वप्न और निश्चय की अभिन्नता हो जाती है।" प्रबन्धकाव्य यदि कोई रसीला फल है, जिसका आस्वादन छिलके, रेशे और बीज निकालने पर ही किया जा सकता है, तो प्रगति (गीति) रचना उसी फल का द्रव रस है जिसे हम घूँट-घूँट पी सकते हैं। इस प्रकार गीतिकाव्यों की उपयोगिता स्पष्ट हो जाती है और संभवतः यही कारण है कि कई उत्कृष्ट प्रबन्ध रचयिताओं ने भी सुन्दर-सुन्दर मधुर गीतों की रचना की है।

भारतीय गीतिकाव्य उतना ही प्राचीन है, जितना 'वेद' क्योंकि वैदिक मंत्रों में सर्वप्रथम रागात्मकता का समावेश हुआ है। विश्व का सबसे प्राचीनतम काव्य ग्रन्थ 'ऋग्वेद' को ही माना जाता है। डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल के शब्दों में "ऋग्वेद की कविता पर्वत की ऊँची चोटियों और तलहटियों में विचरती हुई कभी ऊँचे सृष्टि विज्ञान से हमारा परिचय कराती है, कभी लोक-

जीवन के जाने-पहचाने चित्रों को सामने लाकर रखता जाती है।" इसी प्रकार 'सामवेद' में भी कई सुन्दर-सुन्दर गीत हैं तथा इसे तो आर्य-जाति का आदि गान ही कहा गया है। ~~इसी प्रकार 'सामवेद' में भी कई मनोहारी गीत हैं~~ उत्सवों और यज्ञों में सर्वत्र ही वैदिक मंत्रों का गान प्रचलित था। वैदिक काल के पश्चात् बौद्ध साहित्य की "थेरा गाथाओं" में गीतिकाव्य का समुज्ज्वल रूप दृष्टिगोचर होता है।

बौद्ध-काल में व्यक्तिगत चेतना का विकास होने से साहित्य में भी वैयक्तिक हर्ष-विषाद और आशा-निराशा को प्रधानता मिलने लगी। थेरी गाथाओं में जीवन की नश्वरता और क्षणभंगुरता को चित्रित करते हुए वीतरागी भिक्षु-भिक्षुणियों के वैराग्य के प्रति दृढ़निष्ठ अनुराग और उत्साह को अंकित किया गया है। इनमें प्रकृति-सौंदर्य का भी चित्रण किया गया है तथा करुण रस की अभिव्यक्ति विशेष रूप से की गई है। 'गुलाब राय' का मत है " वास्तव में गाथा शब्द का अर्थ भी गीत है। वैदिक साहित्य

साहित्य में ऋक् और गाथा में अन्तर किया गया है। ऋक् में ईश्वर का स्तवन होता है और गाथा में मनुष्यों, राजाओं आदि का। सामवेद में जहाँ उदात्त, अनुदात्त और स्वरित नामक तीनों स्वरों में ही गीत गाये जाते थे वहाँ धीरे-धीरे संगीत में ताल, छन्द और वाद्य का भी समावेश होने लगा। वेदों की ऋचाओं के उपरान्त वाल्मीकि द्वारा ही सर्वप्रथम छन्दों की रचना की गई और वाल्मीकि रामायण के सृजन के उपरान्त ही संगीत में कई नवीन लक्षण निर्धारित किए गये तथा राग-रागिनियों को भी उत्पन्न किया गया।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संस्कृत साहित्य में गीतिकाव्यों की विशाल एवं उज्ज्वल परम्परा विद्यमान है। गीतिकाव्य के समस्त पद्य बड़े श्रुति-मधुर, रस-पेशल तथा गेयता और रमणीयता से परिपूर्ण हैं।